सरसों की वैज्ञानिक खेती से खाद्य तेल आपूर्ति के साथ आय में वृद्धि

हरनारायण मीना[1], सुशील कुमार सिंह[1], मोहर सिंह मीना[1], मोनू जोरवाल[1], शंकर लाल जाट[2], राधेश्याम[3], अनूप कुमार[2]
इंदु चोपड़ा[3] एवं सी एम परिहार[3]
[1]भाकृअनुप–कृषि तकनीकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)
[2]भाकृअनुप–भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान (दिल्ली इकाई), नई दिल्ली
[3]भाकृअनुप –भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
संवादी लेखक का ई–मेलः hariagro@gmail-com

भारतीय सरसों (*ब्रासिका जुंसिया*) का क्षेत्रफल 70 प्रतिशत से अधिक है। इसका क्षेत्र उत्तर भारत के राज्य जैसे राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश और उत्तराखंड में मुख्य तौर से रबी में लगाई जाने वाली प्रमुख तिलहनी फसल हैस मानव उपभोग के लिए इसके बीज और तेल का उपयोग मसालों, अचार, करी और सब्जियों के स्वाद के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग बालों के तेल, ग्रीस के निर्माण में भी किया जाता है। खली का उपयोग चारा और खाद के रूप में किया जाता है। हरा तना और पत्तियां मवेशियों के लिए हरे चारे का अच्छा स्रोत हैं। तेल केक में श्सिनिरगिनश् होता है, जो स्वादिष्टता का कारण बनता है। इसके कड़वे स्वाद के कारण समस्याऐं और ग्लूकोसाइनोलेट जो प्रोटीन पूरक के रूप में तेल केक के उपयोग को सीमित करता है। पौधों को हरी सब्जियों के रूप में उपयोग किया जाता है, क्योंकि वे आहार में सल्फर और खनिजों की आपूर्ति करते हैं। उद्योग में सरसों के तेल का उपयोग चमड़े को मुलायम बनाने के लिए किया जाता है।

कैनोलाः– सरसों समूह की पारंपरिक किस्मों के तेल में 40–60 प्रतिशत से अधिक इरुसिक एसिड जिसके सेवन से माइकोकार्डिनल घाव और वसा जमा होने की सूचना मिली है। इसी तरह पारंपरिक किस्मों के बीज भोजन में ग्लूकोसाइनोलेट्स की उच्च सामग्री होती है। जो विषाक्त उत्पादों का उत्पादन करती है। इसके सेवन से थायरॉइड फंक्शन बाधित होता है। गण्डमाला और स्वाद में कमी आती है। कम इरुसिक एसिड और ग्लूकोसाइनोलेट्स वाली किस्मों का विकास करें। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप वे सफल किस्में विकसित करें जिनमें 2 प्रतिशत से कम इरूसिक एसिड हो।

स्रोतः– राजस्थान में सूक्ष्म सिंचाई के तहत शुष्क भूमि में सरसों की खेती।

जलवायु और मिट्टी की आवश्यकताएंः– सरसों की फसलें मूल रूप से समशीतोष्ण क्षेत्र में उगाई जाती हैं, हालांकि वे व्यापक अनुकूलन क्षमता रखते हैं। इन उष्ण कटिबंध में अधिक ऊंचाई पर भी खेती की जा सकती है। विभिन्न प्रजातियों के लिए इष्टतम तापमान की आवश्यकता भी अलग है और वही फसल के चरण के साथ बदलता रहता है। सामान्य तौर पर इन फसलों को उच्च तापमान की आवश्यकता होती है बेहतर विकास के लिए प्रारंभिक विकास चरणों और ठंडे मौसम और प्रजनन चरण के दौरान साफ आकाश के दौरान 0.5–3.0, 15–25 और 35–40 डिग्री सेल्सियस की तापमान सीमा को न्यूनतम, इष्टतम और अधिकतम माना जा सकता है। फसल के लिए लगभग 18.25 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। कम आर्द्रता, विशेष रूप से फूल आने के समय साफ मौसम अनुकुल रहता हैस फसल की वृद्धि 25 डिग्री सेल्सियस पर इष्टतम होती है। 35 डिग्री सेल्सियसए बारिश, उच्च आर्द्रता फसल के लिए अनुकूल नहीं हैं। इन शर्तों के अंर्तगत विशेष रूप से एफिड्स और सफेद जंग के

रोग और कीटों की घटनाएं अधिक होती हैं। अत्यधिक ठंड और पाला इस के लिए हानिकारक है, फसल विशेष रूप से फूल आने और बीज बनने और विकास के चरणों के दौरान क्योंकि इसके परिणामस्वरूप मधुमक्खी कम होती है।

मृदा चुनाव एवं खेत की तैयारीः— सरसों की फसल के लिये अच्छे जल निकास वाली भारी हल्की रेतीली एवं दोमट मृदा उपयुक्त होती है। फसल की अच्छी वृद्दि के लिए खेत को भली भांति तैयार करना चाहियें। खेत की तैयारी करने के लिये एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2.3 बार हैरो चलावें। जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जावें। इसके बाद पाटा चलाकर खेत को समतल करें। जिससे मृदा मैं नमी संचित रहें। जहाँ मृदा क्षारीयता एवं लवणीयता से अत्यधिक ग्रस्त हो वहाँ प्रति तीसरे वर्ष में जिप्सम 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से मृदा में प्रयोग करना चाहिए भूमिगत कीड़ो से फसलों की रक्षा के लिए 1.5 प्रतिशत क्विनालफॉस 25 किग्रा/है. की दर से अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए।

उन्नत किस्में एवं उनकी विशेषताः— विभिन्न राज्यों के लिए अनुशंसित विभिन्न जैविक और अजैविक तनावों के लिए किस्में जारी की गई हैं। 'कैनोला' के तहत, जिसमें या तो इरूसिक एसिड की मात्रा कम होती है या इरुसिक एसिड और ग्लूकोसाइनोलेट दोनों ही कम मात्रा में होते हैं। पारंपरिक किस्मों के स्थान पर उन्नत किस्मों से उत्पादकता में 15–20% की वृद्धि की जा सकती है उच्च उत्पादकता प्राप्त करने के लिए किसानों द्वारा उगाया जाता है।

प्रजाति	विशेषता
अरावली (आर.एन.393)	इस किस्म की उँचाई मध्यम होती है। इसमें तेल की मात्रा का 42 प्रतिशत होती है। इस किस्म में 55–60 दिनों में फूल आते हैं। जो 135–138 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। इसकी पैदावार 22–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती हैं। यह किस्म सफेद रोली के प्रतिरोधी होती है।
एन.आर.सी.डी.आर.–2	यह किस्म समय पर सिंचित क्षेत्रों में बुवाई के लिए उपयुक्त है। जो 131–156 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी उपज 20–26 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। जिसमे तेल की मात्रा 36.5–42.5 प्रतिशत होती है। यह किस्म लवणता और उच्च तापमान के लिए सहिष्णु होती है।
वसुन्धरा (आर.एच.9304)	यह किस्म सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त एवं इसकी उँचाई 180–190 से.मी. होती है। इस किस्म की पैदावार 25–27 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं फसलावधि 130–135 दिन की होती है। यह फली चटकने व आड़ी गिरने के प्रतिरोधी होती हैं।
पूसा जय किसान	इस किस्म की उँचाई 160–180 से.मी. होती है। जिसकी उपज 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, फसलावधि 130–140 दिन एवं इसमें तेल की मात्रा 38–40 प्रतिशत होती है। इस किस्म में सफेद रोली, मुरझान व तुलासितस रोगों का प्रकोप अन्य किस्मों की अपेक्षा कम होता है। फलियाँ पकने पर दाने झड़ते नहीं है। एवं इसका दाना कालापन लिए हुए भूरे रंग का होता है। इस किस्म का तेल खाने के लिए उपयुक्त होता है।
एन.आर.सी.एच.बी. 101	सिंचित क्षेत्रों में पछेती बुवाई के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज 14–15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। जो 105–135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है । इसमें तेल की मात्रा 35–42 प्रतिशत होती है।
डी.आर.एम.आर. 150–35	यह जल्दी पकने वाली व चूर्णित आसिता के प्रति सहनशील होती है। इस किस्म की फसलावधि 114 (86–140) दिन की होती है। तथा इसकी पैदावार 19.5–26.3 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। इस किस्म में तेल की प्रतिशत मात्रा 39.8 होती है।
डी.आर.एम.आर. 1165–40	यह किस्म वर्षा आधारित क्षेत्रों में समय पर बुवाई के किये उपयुक्त है। जो 133–151 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी उपज 22–26 क्विंटल प्रति हेक्टेयर व तेल की मात्रा 40–42.5 प्रतिशत तक होती है।
पूसा सरसों–24	कम इरुसिक एसिड 2% से कम
पूसा सरसों–25	सिंचित स्थिति में जल्दी बुवाई के लिए उपयुक्त, उच्च तापमान के लिए सहनशीलता
पूसा सरसों–26	देर से बोने के लिए उपयुक्त
पूसा सरसों–27	बहु फसल प्रणाली के तहत सिंचित स्थिति में जल्दी बुवाई के लिए उपयुक्त
पूसा सरसों–32	उच्च उपज, रोग प्रतिरोध

बुवाई का समयः— सरसों में समय पर बुवाई बहुत महत्वपूर्ण शून्य लागत आदान है, क्योंकि यह इष्टतम स्थिति सुनिश्चित करता है। फसल की वृद्धि और विकास, कीट और बीमारियों के माध्यम से फसल को होने वाले नुकसान को भी कम करता। फसल की बुवाई तब की जाती है जब दैनिक औसत तापमान लगभग 26–28 डिग्री सेल्सियस होता है। यदि अधिकतम तापमान बहुत अधिक है बुवाई से देरी करनी चाहिए या उन किस्मों का चयन करना चाहिए, जो उच्च तापमान को सहन कर सकें। सरसो की फसल में अच्छे उत्पादन के लिए उचित बीजदर के साथ–साथ उचित दूरी तथा बुवाई का उचित समय रखना अति आवश्यक है यदि फसल की बुवाई समय पर की जाये तो बीजो का अंकुरण अच्छी प्रकार से हो पाता है एवं पोधो का ओज भी अच्छा होता है।

बुवाई का उचित समय	25 सितम्बर से 15 अक्टूबर
बीज दर (किग्रा/है.)	4–5
पक्ति से पक्ति (से.मी.)	30
पौधे से पौधे (से.मी.)	10–15
बीज उपचार	बावस्टिन/2 ग्राम/किलोग्राम बीज–एजोटोबैक्टर

विरलीकरणः— पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी बनाए रखने के लिए बुवाई के 15–20 दिन बाद फसल में विरलीकरण कर देना चाहिए।

जीरो टिलेज के तहत मक्का–सरसों–मूंग फसल प्रणाली में सरसोंः— उत्तर पश्चिम भारत में चावल–गेहूं प्रणाली में फसल विविधीकरण के लिए एक अच्छा विकल्प हैंस यह प्रणाली उत्पादकता, लाभप्रदता प्रदान करता है, जबकि साथ ही मिट्टी के स्वास्थ्य और समग्र स्थिरता में सुधार करता है। इस प्रणाली में किसान बहु–फसल प्रणाली के तहत कम लागत से 3 टन प्रति हेक्टेयर सरसों की उपज प्राप्त कर सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक प्रबन्धनः— बुवाई से पूर्व मृदा परिक्षण कराकर सिफ़ारिशो के अनुसार ही रासायनिक उर्वरको का प्रयोग करें। तिलहनी फसलों की अधिक उपज लेने के लिए उर्वरको के साथ साथ देशी खाद व जैव उर्वरको का भी प्रयोग करें। यदि किसी कारण मृदा जाँच न हो तो वहां फसल के लिए क्षेत्रीय सिफ़ारिशो के आधार पर उर्वरको का प्रयोग करना चाहिए। कार्बनिक खादों में पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में पाये जाते है। परन्तु इसके उपयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशाओं में सुधार होता है। जिससे मृदा की जल धारण क्षमता एवं उर्वरता में बढोतरी होती है। कार्बनिक खाद पौधों को मुख्य पोषक तत्वों के साथ साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी प्रदान करती है। अतः उपलब्ध हो तो 8 से 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सडी हुई गोबर की खाद बुआई के 15–20 दिन पूर्व खेत में डालकर जुताई कर अच्छी तरह मिट्टी में मिला देना चाहिए। सामान्यतया मृदा उर्वरता को बनाये रखनें के लिये तीन वर्ष में एक बार गोबर की खाद का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

रासायनिक उर्वरक	मात्रा (किग्रा/है.)	समय और विधि
नत्रजन	40–60	बढ़वार के समय
फास्फोरस (एकल सुपर फास्फेट)	30	बुवाई के समय
पोटाश	30–40	बुवाई/बढ़वार के समय

स्रोतः— रिसर्च फार्म फार्मर्स फील्ड सिमिट, करनाल, हरियाणा

सल्फर पाउडर (90% बेंटोनाइट)	2–3	पर्णीय छिड़काव फूल आने का समय
जिप्सम	250–400	सिफारिश के अनुसार

सघन फसल प्रणालीयों के कारण आजकल मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो गई है। जिनमें जस्ते की कमी महत्वपूर्ण है। अतः जस्ते की कमी वाली मृदा में जस्ता डालने से करीब 15 से 20 प्रतिशत तक पैदावार में बढोतरी होती है। जस्ते की पूर्ति हेतु भूमि में बुआई से पहले 25 किलो ग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर अकेले या जैविक खाद के साथ प्रयोग किया जा सकता है। अगर खड़ी फसल में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई देने पर इसके 0.5 प्रतिशत घोल का फसल की 30–45 दिन की अवस्था पर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। सल्फर और बोरॉन की कमी वाली मिट्टी में फसल की पैदावार खराब होती है। उपज में उल्लेखनीय वृद्धि प्राप्त करने के लिए 20 किग्रा सल्फर और 1 किलो बोरान/हेक्टेयर डालना चाहिए। तराई क्षेत्र में एनपीके + 10 टन एफवाईएम के साथ 40 किग्रा सल्फर + 25 किग्रा $ZnSO_4$ + 1 किग्रा बोरॉन + एज़ोटोबैक्टर (बीज उपचार)।

जैविक उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देना:– सरसो की फसल में लागत कम करने के लिए फास्फेट घुलनशील जीवाणु (पी.एस.बी.) और माइकोराइजा उर्वरक का भी प्रयोग करना चाहिए। जिससे मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाया जा सके। जीवाणु उर्वरक सस्ते और आसानी से उपलब्ध है और इनका प्रयोग भी सुगम है।

सिंचाई प्रबन्धन:– सिंचाई निर्धारण की समय–सारणी को देखते हुए फसल की क्रांतिक अवस्था जैसे पौधो में फूल बनने के समय, फलियों में दाना बनने की अवस्था सिंचाई के प्रति संवेदनशील है। जिनमे पौधो को पानी मिलना नितान्त आवश्यक है। इन अवस्थाओं को क्रांतिक अवस्थाएं कहते है। यदि इन अवस्थाओं पर मृदा में नमी की कमी हो तो सिंचाई अवश्य करें जो फसलोत्पादन में वृद्दि के साथ–साथ आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी होगा। शीत लहर के समय फसल को ठंड से बचाने के लिए उचित रूप से 1/2 हल्की सिंचाई करनी चाहिए। अतिरिक्त जल से इसकी बढ़वार रुक जाती है। सतत निंदाई–गुड़ाई और अतिरिक्त जल के निथार से इसका उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

खरपतवार प्रबंधन:– प्रायः देखा गया है, कि कीट और रोग आदि लगने पर इनकी रोकथाम की ओर तुरन्त ध्यान दिया जाता है। लेकिन किसान खरपतवारों को तब तक बढ़ने देते हैं, जब तक कि वह हाथ से पकड़कर उखाड़ने योग्य न हो जाएं, लेकिन उस समय तक खरपतवार फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करके काफी नुकसान कर चुके होते हैं। फसल के पौधे अपनी प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों से मुकाबला नहीं कर पाते हैं। अतः फसलों को शुरू से ही खरपतवार रहित रखना आवश्यक हो जाता है। यहां पर एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है, कि फसल को न तो हमेशा खरपतवार मुक्त रखा जा सकता है, और न ही ऐसा करना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है। अतः फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण के उपायों को अपनाकर फसलों को खरपतवार रहित रखा जाए तो फसल का उत्पादन अधिक प्रभावित नहीं होता।

सरसों की फसल के सबसे आम खरपतवार *चेनोपोडियम एल्बम* (बथुआ), लैथिरस हैं। *मेलिलोटस इंडिका* (सेनजी), *सर्किय अर्वेन्स* (काटेली), *साइपरस रोटंडस* (मोथा) और *फुमरिया परविफ्लोरा* (गजरी)। राजस्थान में इसकी खेती पर ओराबंकी का विनाशकारी प्रभाव पड़ा है। फसल खरपतवार प्रतियोगिता की महत्वपूर्ण अवधि बुवाई के 45–60 दिन बाद फसलों में अनियंत्रित खरपतवार से 20–70% उपज की कमी हो सकती है।

निवारक विधि:– इस विधि में वे क्रियाएं शामिल हैं, जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है, जैसे– प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी गोबर या कम्पोस्ट की खाद का प्रयोग, सिंचाई की नालियों की सफाई, खेत की तैयारी और बुआई में प्रयोग किये जाने वाले यंत्रों का प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई आदि।

यांत्रिक विधि:– खरपतवारों पर काबू पाने की यह एक सरल एवं प्रभावी विधि है। तिलहनी फसलों की प्रारंभिक अवस्था में बुआई के 15 से 45 दिन के बीच का समय खरपतवारों की प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय है। अतः प्रारम्भिक अवस्था में ही तिलहनी फसलों को खरपतवारों से मुक्त रखना अधिक लाभदायक है। सामान्यतः दो बार निराई–गुड़ाई, पहली बुआई के 20 से 25 दिन बाद तथा दूसरी 40 से 45 दिन बाद करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

रासायनिक विधि:– तिलहनी फसलों में खरपतवारनाशी

रासायनों का प्रयोग करके भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। इससे प्रति हैक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की भारी बचत होती है। लेकिन इन रसायनों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिये, कि इनका प्रयोग उचित मात्रा में उचित ढंग से तथा उपयुक्त समय पर हो अन्यथा लाभ के बजाय हानि की संभावना रहती है। विभिन्न तिलहनी फसलों में प्रयोग किये जाने वाले खरपतवारनाशी रसायनों का विस्तृत विवरण इस प्रकार है, जैसे– फ्लुक्लोरालिन / 1.00 किग्रा/हेक्टेयर का संयंत्र पूर्व समावेशन या पेंडीमेथालिन के पूर्व–उद्भव अनुप्रयोग/ 1.00 किग्रा/हेक्टेयर खरपतवार नियंत्रण में काफी प्रभावी होते हैं। यदि रोपण के बाद खरपतवार निकलते हैं, तो आइसोप्रोटूरॉन / 0.75 किग्रा/हेक्टेयर बुवाई के 30 दिन बाद छिड़काव किया जा सकता है। नाइट्रोफेन / 1.0 से 1.5 किग्रा/हेक्टेयर को 800–1000 लीटर पानी में बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व उपयोग करना खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी पाया गया है।

प्रमुख कीट और उनका प्रबंधनः–

पेन्टेड बग व आरा मक्खी– अंकुरण के 7–10 दिन में ये कीट अधिक हानि पहुंचाते हैं । इनकी रोकथाम के लिये 7.5 ग्राम इमीडाक्लोप्रिड 70 डब्लू . एस . प्रति एक किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें । मिथाईल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण 20 किलो या मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यू एस सी एक लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकें / छिड़कें।

हीरक तितली– रोकथाम हेतु एक लीटर क्यूनॉलफोस ।/2 सी प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिडकें।

मोयला– फसल में 50 से 60 मोयला प्रति सेन्टीमीटर पौधे की केन्द्रीय शाखा या 30 प्रतिशत पौधे ग्रसित होने पर नियंत्रण हेतु छिड़काव किया जाए। मोयला की रोकथाम हेतु मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत या कार्बेरिल 5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर भुरकें। अथवा पानी की सुविधा वाले स्थानों में थायोमिथेंक्साम 25 घुलनशील चूर्ण 100 ग्राम या मैलाथियान 50 ई सी सवा लीटर या डाइमिथोएट 30 ई सी 875 मिलीलीटर या मिथाईल डिमेटोन 25 ई सी या कार्बेरिल 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण ढाई किलो प्रति हैक्टेयर की दर से पानी में मिलाकर छिड़कें अथवा बुवाई के 6–8 सप्ताह बाद सिंचाई के साथ फोरेट 10 जी की 10 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से देवें ।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबन्धनः–

सफेद रोली– इस रोग के प्रकोप के कारण पत्तियों, तनों, पुष्पों व फलियों पर सफेद फफोले हो जाते हैं। इस रोग से ग्रसित पौधों पर फलियां व बीज नहीं बनते। इस रोग की रोकथाम के लिए बीज को एपरोन की 6 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए। फसल पर मेटालेक्जिल 8 प्रतिशत व मेन्कोजेब की 2.5 ग्राम मात्रा को प्रतिलीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव या भुरकाव करना चाहिये।

छाछया– इस रोग के प्रकोप द्वारा पूरे पौधे सफेद पाउडर जैसे पदार्थ से ढक जाते हैं। पौधे की पत्तियां झड़ जाती हैं तथा फलियों में दाने सिकुडे हुए बनते हैं। इसके नियत्रंण के लिये डायनोकेप या केराथेन की 1 किलो या 20 किलो गन्धक का चूर्ण प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिये।

तुलासिता– इस रोग के प्रकोप के कारण पत्तियों के नीचे सफेद फफूंद रूई के समान दिखाई देती है पत्तियों के उपर हल्के भूरे बादामी रंग के धब्बे बन जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए फसल पर मेटालेक्जिल 8 प्रतिशत + मैंकोजेब की 2.5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिये। तुलासिता के नियंत्रण के लिये केराथेन की 1 लीटर मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर भी छिड़काव किया जा सकता है।

कटाई, थ्रेसिंग और उपजः– आमतौर पर सरसों की फसलों की कटाई 75 प्रतिशत फलियों के पीले होने और बीज की नमी की मात्रा 30 से 40% के आसपास होते ही कर ली जाती है। फसल की कटाई अधिमानतः सुबह के घंटों में की जानी चाहिए, जब फली रात की ओस से थोड़ी नम हो जाती है ताकि बिखरने वाले नुकसान को कम किया जा सके और कुछ दिनों के लिए धूप में सुखाएं। थ्रेसिंग से पहले अनाज में नमी की मात्रा 12 से 20% के बीच होनी चाहिए। उत्पादन अधिक होने पर कंबाइन या मल्टी क्रॉप थ्रेशर का भी प्रयोग किया जाता है। विनोइंग द्वारा बीजों को अलग किया जाता है। भंडारण के समय बीज की नमी 8% से कम होनी चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में सरसों 20–25 क्विंटल/हेक्टेयर उपज होती है। मिश्रित फसल; 2–3 क्विंटल/हेक्टेयर; शुद्ध फसल – 10–15 क्विंटल/हेक्टेयर उपज होती है।